सिद्धार्थ वशिष्ठ उर्फ मनु शर्मा

बनाम

राज्य (एन.सी.टी दिल्ली)

(आपराधिक एम. पी. संख्या 1775/2007)

में

(आपराधिक अपील संख्या 179/2007)

12 मई, 2008

(सी.के. ठक्कर और डी. के. जैन जेजे.)

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 389 - दण्डादेश का निलंबन और जमानत पर रिहा करना - आरोप अन्तर्गत धारा 302 सपठित धारा 201 और 120बी भा.दं.सं. और अंतर्गत धारा 27 आयुध अधिनियम-विचारणीय न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति-उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि-अपील के लंबित रहने के दौरान सर्वोच्च न्यायालय में धारा 389 के तहत आवेदन-निर्धारित: अपराध की गंभीरता, गहराई और अपराध करने का तरीके को देखते हुए दण्डादेश के निलंबन और जमानत पर रिहा करने का कोई मामला नहीं है- सुनिश्चत समय के भीतर अपील पर भी सुनवाई होने की संभावना है- दंड संहिता 1860- धारा 302 सपठित धारा 201 और 120बी- आयुध अधिनियम, 1959- धारा 27।

प्रार्थी-अभियुक्त को भा.दं.सं. की धारा 302 सपठित धारा 201 और 120 बी भा.दं.सं. और आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27 के आरोपो में दोषमुक्त किया गया था। अपील में, उच्च न्यायालय द्वारा उसे उपरोक्त आरोपों में दोषसिद्ध किया गया। इस न्याायलय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान, दं.प्र.सं. की धारा 389 के आवेदन पर दण्डादेश के निलंबन और जमानत की मंजूरी पर इस न्यायालय द्वारा सुनवाई की गई।

कोर्ट ने आवेदन का निस्तारण करते हुए

अभिनिर्धारित 1.1 तथ्यों और मामले की परिस्थितियों के आधार पर, दं.प्र.सं. की धारा 389 के तहत शक्ति का प्रयोग करने के लिए यह उपयुक्त मामला नहीं है। हालांकि विचारणीय न्यायालय द्वारा प्रार्थी-अभियुक्त को उन अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया है जिनके लिए उस पर आरोप लगाया गया था, उच्च न्यायालय ने दोषमुक्त करने के आदेश को उलट दिया और उसे भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत दोषसिद्ध किया और आजीवन कठोर कारावास की सजा सुनाई। उक्त आदेश से व्यथित होकर, उन्होने एक अपील दायर की है जिसे स्वीकार कर लिया गया है, पहले से बोर्ड पर है और अन्तिम सुनवाई का इन्तजार है। इसलिए समय की मापनीय दूरी के भीतर अपील पर सुनवाई होने की संभावना है। अपराध की संजीदगी, जिस तरह से अपराध करना बताया गया और अपराध की

गंभीरता को ध्यान में रखते हुए, प्रार्थी द्वारा सजा के निलंबन और जमानत देने का कोई मामला नहीं बनाया गया है। (पैरा 35)

अखिलेश कुमार सिन्हा बनाम बिहार राज्य, **2000 (6) एससीसी 461;** *विजय कुमार बनाम नरेंद्र और अन्य,* **2002 (9) एससीसी 364;** *रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जैसवाल और अन्य* **2002 (9) एस सीसी 366;** *हरियाणा राज्य बनाम हसमत,* **2004 (6) एससीसी 175;** *किशोरी बनाम रूपा और अन्य* **2004 (7) एससीसी 638;** *महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर वामनराव समर्थ,* **2008 (4) स्केल 412** निर्भर होना।

कश्मीरा सिंह बनाम पंजाब राज्य, **1977 (4) एससीसी 291;** *बाबू सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* **1978 (1) एससीसी 579;** *शैलेन्द्र कुमार बनाम दिल्ली राज्य* **2000 (4) एससीसी 178: जेटी 2000 (1) एससी 184**- प्रतिष्ठित ।

एम्परर बनाम हचिंसन, **एआईआर 1931 एएलएल 356- संदर्भित।**

1.2 प्रार्थी को एक सक्षम आपराधिक न्यायालय (उच्च न्यायालय) द्वारा दोषी पाया गया है और दोषसिद्घ ठहराया गया है। इसलिए, आरोपी के पक्ष में निर्दोषता की प्रारंभिक धारणा अब प्रार्थी को उपलब्ध नहीं है । उच्च न्यायालय ने विचारणीय न्यायालय के दृष्टिकोण और अभियोजन पक्ष के गवाहों पर विश्वास न करने के लिए दर्ज किए गए आधार को स्वीकार न करने के ठोस कारण बताए है। (पैरा 16 और 18)

2. केवल इस तथ्य से कि विचारण की अवधि के दौरान, अभियुक्त जमानत पर था और स्वतंत्रता का कोई दुरूपयोग नहीं हुआ था, पर से दण्डादेश के निष्पादन के निलंबन का आैर जमानत देने का वारंट नहीं हैं। इस बात पर विचार करना वास्तव में आवश्यक है कि क्या दण्डादेश के निष्पादन निलंबित करने और जमानत देने के कारण मौजूद है। (पैरा 34)

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक एम.पी. संख्या 1775/2007

आपराधिक अपील संख्या 193/2006 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के निर्णय एवं आदेश दिनांक 18/20.12.2006 से

राम जेठमलानी, पी.एच. पारिख, लता कृष्णमूर्ति, ई.आर. कुमार, ललित चौहान, अजय झा,सौरभ अजय गुप्ता, मेरी मिज्ती, राजदीप बेनर्जी, जोईता बेनर्जी, बांसुरी स्वराज, रूकमणी बोबडे, सोमन्द्री गौड (पी.एच. पारिख एंड कम्पनी की आेर से) प्रार्थी की ओर से।

गोपाल सुब्रमण्यम एएसजी, मुक्ता गुप्ता, निखिल नययर, अंकित सिंघल, टी.वी.एस. राघवेन्द्र श्रेयस और विभा गर्ग प्रत्यर्थी की ओर से।

ममता कालरा, हस्पक्षेप करने वाली पार्टी के लिए व्यक्तिगत रूप से।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

सी के ठक्कर, जे. 1. वर्तमान आवेदन अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (इसके बाद' ') की धारा

389 के तहत अपील इस न्यायालय में लंबित रहने तक दण्डादेश को निलंबित करने और उसे जमानत पर रिहा करने के लिए दायर किया गया है।

2. चूंकि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज दोषसिद्धि और सजा के आदेश के खिलाफ अपील इस न्यायालय द्वारा स्वीकार की जाती है और अन्तिम सुनवाई की प्रतीक्षा है। हम बड़े प्रश्नों में प्रवेश नहीं करेंगे और दण्डादेश के निलम्बन के लिए वर्तमान आवेदन से निपटेंगे।

3. संक्षेप में, अभियोजन पक्ष का मामला यह था कि 29-30 अप्रैल, 1999 को कुतुब कोलोनेड के अन्दर 'टैंमरिंड कैफे में एक पार्टी का आयोजन किया गया था। यह एक निजी पार्टी थी जिसमें कुछ लोगों को आमन्त्रित किया गया था और शराब परोसी गई थी। जेसिका लाल (तब से मृतक) और एक श्यान मुंशी बार के प्रभारी थे। अभियोजन पक्ष का आरोप था कि अपीलार्थी सिद्धार्थ वशिष्ठ उर्फ मनु शर्मा अपने दोस्तों के साथ वहां आये और शराब मांगी। बार बंद हो जाने से जेसिका लाल और श्यान मुंशी ने उसे शराब उपलब्ध नहीं कराई। अभियोजन पक्ष के अनुसार, शराब परोसने से इनकार करने पर अपीलार्थी क्रोधित हो गया, उसने अपनी. 22 पिस्तौल निकाली और दो राउंड फायर की, पहली छत पर और दूसरी जेसिका लाल पर। गोली लगने से जेसिका लाल गिर गई जो घातक साबित हुई और उनकी मौत हो गई। अभियोजन पक्ष के दावे के अनुसार, कई लोगों ने इस

घटना को देखा। वहां मौजूद बीना रमानी ने अपीलार्थी को रोका और उससे सवाल किया कि उसने जेसिका लाल को गोली क्यों मारी। उसने आरोपी से हथियार की भी मांग की लेकिन आरोपी ने पिस्तौल नहीं दी और भाग गया।

4. एफआईआर दर्ज की गई, केस दर्ज किया गया और जांच की गई। मुकदमे में, 100 से अधिक गवाहों से पूछताछ की गई। विचारणीय न्यायालय ने आरोपी को यह कहते हुए दोषमुक्त कर दिया कि अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित नहीं किया गया कि आरोपी ने वह अपराध किया था जिसके लिए अन्य आरोपियों के साथ उस पर आरोप लगाया गया था।

5. राज्य ने विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज किये गए दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील दायर की। दिल्ली उच्च न्यायालय ने माना कि विचारणीय न्यायालय का आरोपियों को दोषमुक्त करना गलत था और अभियोजन पक्ष, अपीलार्थी (साथ ही दो अन्य आरोपियों) के खिलाफ अपराध प्रमाणित करने में सफल रहा और तद्नुसार इन्टर एलिया भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि दर्ज की गई और आजीवन कारावास की सजा दी गई।

6. उच्च न्यायालय ने पाया कि उसे ''यह मानने में कोई हिचकिचाट नहीं है' कि 29-30 अप्रैल, 1999 को 'टैमरिंड कैफे' में जेसिका लाल की हत्या करने के लिए अपीलार्थी भा.दं.सं. की धारा 302 सपठित धारा 201

और 120बी भा.दं.सं. और साथ ही धारा 27 आयुध अधिनियम के अंतर्गत दोषी था और उसे आजीवन कठोर कारावास की सजा देने का आदेश दिया गया और अन्य अपराधों के लिए भी सजा सुनाई गई।

7. हालांकि, अन्य दो आरोपियों के संबंध में न्यायालय ने यह माना कि वे भा.दं.सं. की धारा 201 और 120बी के तहत अपराध करने के लिए दोषी थे।

8. अपीलार्थी-प्रार्थी ने उच्चतम न्यायालय (आपराधिक अपीलीय अधिकारिता का विस्तारण) अधिनियम, 1970 की धारा 2 (ए) तथा संहिता की धारा 379 के तहत अधिकारिता अपील प्रस्तुत कर इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। दाखिले के लिए अपील लगाई गई थी। 7 मार्च 2007 को अपील स्वीकार कर ली गई और जमानत के लिए आवेदन पर नोटिस जारी किया गया, प्रत्यर्थी की ओर से वकील उपस्थित हुए और नोटिस स्वीकार कर लिया। इसे अप्रैल, 2007 के पहले सप्ताह में सूचीबद्ध करने का आदेश दिया गया था, इस बीच जवाबी हलफनामा, यदि कोई हो दायर किया जाना था।

9. 2 अप्रैल, 2007 को जब मामला बोर्ड में आया, तो न्यायालय ने अन्य आरोपियों के संबंध में जमानत के आदेश पारित किए, लेकिन तत्काल मामले (सीआरएल एम.पी. संख्या 1775 /2007) में, न्यायालय ने मामले की अंतिम सुनवाई तय की। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि अपील

पर सुनवाई नहीं हो सकी। 24 अप्रैल, 2008 को, न्यायालय ने 12 फरवरी, 2008 को'' ''

अपीलों को सूचीबद्ध करने का आदेश दिया। इस प्रकार मामला इस पीठ के समक्ष रखा गया।

10. हालांकि, कई अन्य मामालों को देखते हुए अपील पर सुनवाई नहीं हो सकी। अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राम जेठमलानी ने निस्संदेह न्यायालय से मामले को बिना बारी के लेने का अनुरोध किया। उन्होंने वैकल्पिक रूप से प्रस्तुत किया कि यदि अपील पर सुनवाई नहीं हुई है तो जमानत के लिए आवेदन पर सुनवाई की जा सकती है क्योंकि उनके अनुसार, उन्होंने पहले जब अपील दाखिल व सुनवाई के लिए रखी गई और स्वीकार कर ली गई थी तब जमानत के लिए दवाब नहीं डाला था, क्योंकि न्यायालय ने मुख्य मामले की अंतिम सुनवाई तय कर दी थी। उनके अनुसार अपीलार्थी जेल में था और यदि अपील पर लम्बे समय तक सुनवाई नहीं होगी, तो अभियुक्त पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसलिए, तथ्यों और परिस्थतियों के आधार पर हमने रजिस्ट्री को दण्डादेश के निलंबन और जमानत देने के लिए आवेदन बोर्ड पर रखने का निर्देश दिया ताकि प्रार्थी-अपीलार्थी-अभियुक्त की प्रार्थना पर उचित आदेश पारित किया जा सके।

11. हमने पक्षों के विद्वान वकील को सुना।

12. प्रार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाया गया है। विचारणीय न्यायालय द्वारा अभियोजन पक्ष के साक्षीगण की संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के बाद अभियुक्त के पक्ष में दोषमुक्त करने का आदेश दर्ज किया। उन्होंने प्रस्तुत किया कि विचारणीय न्यायालय ने माना कि पीडब्ल्यू 1 -दीपक भोजवानी और पीडब्ल्यू 30-श्रवण कुमार को अभियोजन पक्ष द्वारा 'प्लांट' किया गया था। पीडब्ल्यू 2- श्यान मुंशी ने स्पष्ट कथन किया था कि दो व्यक्तियों द्वारा गोलियां चलाई गई और अपीलार्थी-अभियुक्त उनमें से एक नहीं था। न तो पीडब्ल्यू 1- दीपक भोजवानी, न ही पीडब्ल्यू 2- श्यान मुंशी, न ही पीडब्ल्यू 3- शिव दास यादव, पीडब्ल्यू 4 - करण राजपूत चश्मदीद साक्षीगण थे। चश्मदीद साक्षी पीडब्ल्यू 6- मालिनी रमानी और पीडब्ल्यू 20- बीना रमानी की साक्ष्य को खारिज करने के लिए विचारणीय न्यायालय द्वारा ठोस और विश्वासप्रद कारण दर्ज किए गए है। यह साबित नहीं हुआ कि टाटा सफारी अपीलार्थी-अभियुक्त के कब्जे में थी, न ही यह दिखाने के लिए कुछ था कि उसने 29 अप्रैल, 1999 को उक्त वाहन का इस्तेमाल किया था। बैलिस्टिक विशेषज्ञ की रिपोर्ट अभियोजन का समर्थन नहीं करती है और उस आधार पर भी, विचारणीय न्यायालय ने दोषमुक्ति के आदेश को पारित करके सही किया है।

13. विद्वान वकील के अनुसार, पीडब्ल्यू 20- बीना रमानी चश्मदीद साक्षी नहीं थी। सेशन न्यायालय में मुकदमे के दौरान लोक अभियोजक

द्वारा इस आशय का एक बयान दिया गया था। यह भी स्पष्ट था कि उक्त साक्षी के खिलाफ झूठा उत्पाद शुल्क मामला दर्ज किया गया था और उस पर अभियोजन पक्ष के पक्ष में गवाही देने के लिए दबाब डाला गया था और जैसे ही उसकी गवाही समाप्त हो गई, उसे जुर्माना लगाने पर अपराध को कम करने के लिए बाध्य किया गया, जो दर्शाता है कि यह अपीलार्थी-अभियुक्त, जो पूरी तरह से निर्दोष था, को शामिल करने का अभियोजन का व्यवस्थित प्रयास था। वकील ने यह भी कहा कि आरोपी की तस्वीर पुलिस ने जांच के दौरान एकत्र की थी और अभियोजन पक्ष के गवाहों को दिखाई गई थी और आरोपी की पहचान करना व्यर्थ था। मीडिया ने सक्रिय भूमिका निभाई थी और मुकदमे के समापन से पहले ही, उन्होंने प्रार्थी को वस्तुतः 'अभियुक्त नहीं बल्कि 'दोषी या 'अपराधी के रूप में वर्णित किया था। विद्वान वकील के अनुसार, विचारणीय न्यायालय ने बाहरी कारकों से प्रभावित हुए बिना निरपेक्षता और निष्पक्षता से साक्ष्य पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार किया और आरोपी को संदेह का लाभ दिया। उच्च न्यायालय, विचारणीय न्यायालय के निष्कर्ष को पलटने और प्रार्थी को दोषी ठहराने और आजीवन कारावास की सजा देने में 'पूरी तरह' गलत था। वकील ने कहा कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कानून के अनुरूप नहीं है और प्रार्थी के पास उसकी अपील स्वीकार किए जाने का उचित और अच्छा मौका है। वह लंबे समय से जेल में है और चूंकि अपील में समय लगने की संभावना है, इसलिए प्रार्थी-अभियुक्त के दण्डादेश को निलंबित करने और

जमानत देने की एक उचित प्रार्थना स्वीकार की जाकर, उसे ऐसे नियमों और शर्तों पर जैसा यह न्यायालय उचित समझे जमानत देकर रिहा किया जाना चाहिए।

14. श्री गोपाल सुब्रमण्यम, विद्वान अतिरिक्त महाअधिवक्ता, ने दूसरी ओर, दण्डादेश को निलंबित करने और जमानत देने की प्रार्थना का पुरजोर विरोध किया। उन्होंने कहा कि विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया दोषमुक्त करने का आदेश स्पष्ट रूप से गलत था और रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों के खिलाफ था। उच्च न्यायालय ने 'प्रथम अपील' की अदालत के रूप में, सबूतों पर विचार किया और माना कि अभियोजन पक्ष के गवाहों पर विश्वास न करके विचारणीय न्यायालय 'पूरी तरह से' गलत था। उच्च न्यायालय ने यह भी देखा कि अभियोजन पक्ष के गवाहों पर विश्वास न करने के लिए विचारणीय न्यायालय द्वारा जिन आधारों पर विचार किया गया, उन्हें कानूनी, उचित या रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों पर आधारित नहीं कहा जा सकता है। वकील ने प्रस्तुत किया कि विचारणीय न्यायालय के पास पी.डब्ल्यू 1- दीपक भोजवानी, पी.डब्ल्यू 30- श्रवण कुमार, पी.डब्ल्यू 20- बीना रमानी, पी.डब्ल्य 6- मालिनी रमानी और अन्य गवाहों की साक्ष्य पर विश्वास नहीं करने का कोई कारण नहीं था। वकील ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए कारणों पर विस्तार से विचार किया और सही कहा कि अभियोजन पक्ष द्वारा किसी विशेष गवाह को 'प्लांट' किया गया बताना एक गंभीर मामला है

और आम तौर पर कोई भी न्यायालय ऐसा नहीं करेगा। श्री सुब्रमण्यम ने यह भी कहा कि अभियोजन साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि प्रार्थी अन्य आरोपियों के साथ 29 अप्रैल, 1999 को टैमरिंड कैफे में आया, शराब मांगी और जब उसे बार बंद होने के आधार पर शराब देने से इनकार कर दिया गया, तो वह बहुत क्रोधित हो गया, अपनी .22 पिस्तौल निकाली और दो राउंड फायरिंग की; एक छत की ओर और दूसरी जेसिका लाल की ओर जिससे उसकी मौत हो गई। यह उस समय वहां मौजूद कई लोगों ने देखा। हालांकि, उनमें से कुछ ने अभियोजन का समर्थन नहीं किया। विद्वान अतिरिक्त महाअधिवक्ता ने कहा कि आरोपियों का आतंक इस तथ्य से स्पष्ट है कि लगभग 2 दर्जन गवाह पक्षद्रोही हो गए। विचारणीय न्यायालय को इस पहलू पर विचार करना चाहिए था लेकिन अन्यथा भी, उपरोक्त स्थिति को देखते हुए, जिन गवाहों से पूछताछ की गई और जिन्होंने अभियोजन का समर्थन किया, उन पर भी विचारणीय न्यायालय को विश्वास करना चाहिए था। हालांकि, वह ऐसा करने में विफल रहा। इसलिए, उच्च न्यायालय उन गवाहों के साक्ष्य पर विश्वास करना और दोषसिद्धि का आदेश दर्ज करने में पूरी तरह उचित था।

15. यह भी कहा गया कि उच्च न्यायालय के अनुसार, अपराध करने के बाद आरोपी फरार हो गया। जांच के दौरान पुलिस अधिकारियों ने उनके फार्म हाउस पर छापा मारा था। वह न तो वहां मिला और न ही उसने तुरंत आत्मसमर्पण किया। उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष भी दर्ज किया

कि कुतुब कोलोनेड के दौरे के समय आरोपी द्वारा इस्तेमाल की गई टाटा सफारी को नोएडा से बरामद किया गया था जिसे अपराध स्थल से हटा दिया गया था। उच्च न्यायालय के अनुसार, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से पता चलता है कि टाटा सफारी को 29-30 अप्रैल, 1999 की रात को कुतुब कोलोनेड में पार्क किया गया था। वाहन पिकाडिली एग्रो इंडस्ट्रीज लिमिटेड का था, जिसका आरोपी निश्चित रूप से निदेशक था। वाहन को घटना स्थल से गुप्त रूप से हटा दिया गया। उच्च न्यायालय ने कहा कि आरोपी ने स्वीकार किया है कि उसके पास. 22 बोर की लाइसेंसी पिस्तौल है। उच्च न्यायालय को यह भी पता था कि कई गवाह मुकर गए और अभियोजन का समर्थन नहीं किया, लेकिन उपलब्ध सामग्री से, यह संदेह से परे प्रमाणित हुआ कि यह प्रार्थी ही था जो 29-30 अप्रैल, 1999 की रात को कुतुब कोलोनेड गया था और शराब की मांग की थी और जेसिका लाल और श्यान मुंशी द्वारा मना करने पर वह क्रोधित हो गया और उसने दो गोलियां चला दीं, जिनमें से एक जेसिका लाल को लगी और घातक साबित हुई। इसलिए, विद्वान अतिरिक्त महाअधिवक्ता द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कानूनी, वैध और कानून के अनुरूप है और विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज दोषमुक्ति के आदेश को रद्द करने में उच्च न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि नहीं की गई है।

16. हम सचेत और सावधान है कि मुख्य मामला (अपील) स्वीकार कर लिया गया है और अंतिम सुनवाई के लिए लंबित है। इसलिए, गुण-

दोष के आधार पर की गई टिप्पणियां, किसी न किसी रूप में, अपील के एक या दूसरे पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। इसलिए हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य की सत्यता या अन्यथा में प्रवेश नहीं कर रहे हैं। हालांकि, इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि आज की तारीख में, प्रार्थी को एक सक्षम आपराधिक न्यायालय द्वारा दोषी पाया गया और दोषी ठहराया गया है। इसलिए, आरोपी के पक्ष में निर्दोषता की प्रारंभिक धारणा अब प्रार्थी के लिए उपलब्ध नहीं है।

17. पैरा 56 में, उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की

> "56. अभिलेख पर मौजूद सामग्री से उत्पन्न परिस्थितियों की समग्रता में चुनौती के अधीन निर्णय हमें रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का एक अपरिपक्व मूल्यांकन प्रतीत होता है जो आत्मविरोधाभासी है, सामग्री की गलत व्याख्या पर आधारित है और टिकाऊ नहीं है। हम पाते है कि बिना रमानी ने सिद्धार्थ वशिष्ठ उर्फ मनु शर्मा, अमरदीप सिंह गिल, आलोक खन्ना और विकास यादव की पहचान घटना के समय टैमरिंड कैफे में मौजूद व्यक्तियों के रूप में की है, उन्होंने मनु शर्मा को घातक गोली चलाते हुए भी देखा जो जेसिका लाल को लगी। उसकी गवाही की पुष्टि मालिनी रमानी और जॉर्ज मेलहोट की साक्ष्य से भी होती है। मनु

शर्मा के पास. 22 बोर की एक लाइसेंसी पिस्तौल थी, जिसे उन्होंने अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए पेश नहीं किया है और इसके विपरित झूठी दलील दी है कि पिस्तौल, उसके गोला बारूद और लाइसेंस पुलिस द्वारा 30.04.1999 को हटा दिया गया था। दिखाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य मौजूद है। हमें अभिलेख में मौजूद सामग्री से यह भी पता चला है कि मनु शर्मा ने भागने के दौरान अपना वाहन छोड़ दिया था। हमें यह भी पता चला है कि जिस बन्दुक से जेसिका लाल को चोट पहुंचाने के लिए गोला बारूद का इस्तेमाल किया गया था, वह. 22 बोर का पिस्तौल था जिसे मनु शर्मा ने स्वीकार किया था और इसी तरह का एक जिन्दा कारतूस लावारिस टाटा सफारी से बरामद किया गया था। ऐसे में यह मानने में कोई झिझक नहीं है कि मनु शर्मा टैमरिंड कैफे में 29/30.04.1999 को जेसिका लाल की हत्या करने के लिए भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत और धारा 27 आयुध अधिनियम के तहत अपराध का दोषी है।"

18. उच्च न्यायालय ने विचारणीय न्यायालय के दृष्टिकोण अभियोजन पक्ष के गवाहों पर विश्वास न करने के लिए दर्ज किए गए आधार को स्वीकार न करने के ठोस कारण भी दिए है।

19. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राम जेठमलानी ने निसंदेह कहा कि अभियोजन पक्ष के गवाहो पर भरोसा न करके विचारणीय न्यायालय सही था, लेकिन श्री गोपाल सुब्रमण्यम ने कहा कि विचारणीय न्यायालय का दृष्टिकोण गलत और अनुचित था। उच्च न्यायालय के अनुसार यह विकृति के कगार पर था।

20. इस स्तर पर किसी भी तरह से कोई भी राय व्यक्त करना जल्दबाजी होगी, लेकिन तथ्य यही है कि विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए दोषमुक्ति के आदेश को रद्द कर दिया गया है और प्रार्थी-अभियुक्त को भा.दं.सं. के तहत दण्डनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है और आजीवन कारावास की सजा भुगतने का आदेश दिया है।

21. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राम जेठमलानी ने इस न्यायालय के कई निर्णयों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। इनमें से कुछ प्री-ट्रायल चरण में जमानत देने से संबधित है। ऐसे मामलों में न्यायालयों ने कई कारकों पर विचार किया है, जैसे किसी अभियुक्त के पक्ष में तब तक निर्दोषिता की अवधारणा बनी रहती है जब तक यह स्थापित नहीं हो जाता है कि वह दोषी है, उसे अपने बचाव के लिए तैयारी करनी होगी और उसे अपने मामले की देखभाल करने का हर अवसर मिलना चाहिए, एक आरोपी के लिए ऐसी तैयारी करना बहुत मुश्किल होगा यदि वह जेल में होगा बजाय जेल से बाहर होने के। इन विचारों में से एक जिसे न्यायालय उस

स्तर पर ध्यान में रखेगी, वह अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चत करना है। इसलिए, यदि न्यायालय संतुष्ट है कि मौजूदा मामला आरोपी के पक्ष में ऐसी रियायत देने के लिए उपयुक्त है तो जमानत प्रस्तुत किये जाने पर उसे जमानत पर रिहा कर दिया जाता है।

22. लगभग आठ दशक पहले, *सम्राट बनाम हचिंसन* के प्रमुख मामले में, एआईआर 1931 आॅल 356: 32 सीआरएलजे 1271: 33 आईसी 842 (मेरठ षडयंत्र मामला), बाॅयज, जे. ने कहा

> ‘‘मुकदमें में दौरान किसी आरोपी व्यक्ति को हिरासत में रखने के उद्देश्य के बारे में कहा गया है कि उद्देश्य सजा नहीं है। किसी आरोपी व्यक्ति को इस धारणा पर दण्डित करने के उद्देश्य से गिरफ्तार रखना कि वह दोषी है, भले ही अंततः वह बरी हो जाये, अनुचित है। यह सबसे अधिक स्पष्ट है कि विचाराधीन व्यक्ति को हिरासत में रखने का एकमात्र वैध उद्देश्य उस अपराध की पुनरावृति को रोकना है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है, जहां ऐसी पुनरावृति का स्पष्ट खतरा है और मुकदमें में उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करना है। उनमें से पहला उद्देश्य स्पष्ट रूप से कुछ हद तक अभियुक्त के अपराध की धारणा को शामिल करता है, लेकिन विचारण अपने आप में अभियुक्त

के अपराध की प्रथम दृष्टया धारणा पर आधारित है और यह मानना असंभव है कि यह विचार करने के लिए उचित आधार नहीं माना है। हालांकि मुख्य उद्देश्य स्पष्ट रूप से अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करना है"

(जोर दिया गया)

23. समवर्ती निर्णय में, मुखर्जी, जे. ने यह भी कहा;

"धारा 496 और 497, दं.प्र.सं. से निष्कर्ष निकाला जाने वाला सिद्धांत यह है कि जमानत देना नियम है और इनकार अपवाद है। ऐसा होना ही चाहिए, यह देखना बिल्कुल भी मुश्किल नहीं है। एक आरोपी व्यक्ति को तब तक कानून निर्दोष मानता है जब तक उसका अपराध साबित नहीं हो जाता। एक संभावित निर्दोष व्यक्ति के रूप में वह स्वतंत्रता और अपने मामले की देखभाल करने के हर अवसर का हकदार है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि एक आरोपी व्यक्ति, यदि वह स्वतंत्रता का आनंद लेता है, बजाय कि वह हिरासत में होता तो उसके मामले पर ध्यान देने और अपना उचित बचाव करने की बेहतर स्थिति में होगा।"

(जोर दिया गया)

24. उपरोक्त सिद्धांत को उसके बाद समय समय पर दोहराया जाता रहा है।

25. संहिता की धारा 389 स्पष्ट रूप से और विशेष रूप से अपील लंबित रहने तक सजा के निलंबन और अपीलार्थी को जमानत पर रिहा करने से संबधित है। वो कहता है;

389. *अपील लम्बित रहने तक दण्डादेश का निलंबन; अपीलार्थी का जमानत पर छोड़ा जाना:-* (1) अपील न्यायालय, इस कारणों से जो उसके द्वारा अभिलिखित किये जायेंगे, आदेश दे सकता है कि उस दण्डादेश या आदेश का निष्पादन, जिसके विरूद्ध अपील की गई है, दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा की गई अपील लंबित रहने तक निलंबित किया जाए और यदि वह व्यक्ति परिरोध में है तो यह भी आदेश दे सकता है कि उसे जमानत पर या उसके अपने बंधपत्र पर छोड़ दिया जाये।

(2) अपील न्यायालय को इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग उच्च न्यायालय भी किसी ऐसी अपील के मामले में कर सकता है जो किसी दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा उसके अधीनस्थ न्यायालय में की गई है।

(3) जहां दोषसिद्ध व्यक्ति ऐसे न्यायालय का जिसके द्वारा वह दोषसिद्ध किया गया है यह समाधान कर देता है कि वह अपील प्रस्तुत करना चाहता है वहां वह न्यायालय -

(i) उस दशा में जब ऐसा व्यक्ति, जमानत पर होते हुए, तीन वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डादिष्ट किया गया है, या

(ii) उस दशा में जब अपराध, जिसके लिए ऐसा व्यक्ति दोषसिद्ध किया गया है जमानतीय है और वह जमानत पर है, यह आदेश देगा कि दोषसिद्ध व्यक्ति को इतनी अवधि के लिए जितने से अपील प्रस्तुत करने और उपधारा(1) के अधीन अपील न्यायालय के आदेश प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय मिल

जायेगा जमानत पर छोड दिया जाए, तब तक कारावास का दण्डादेश निलंबित समझा जायेगा।

4. जब अंततोगत्वा अपीलार्थी को किसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया जाता है, तब वह समय, जिसके दौरान वह ऐसे छूटा रहता है, उस अवधि की संगणना करने में, जिसके लिए उसे ऐसा दण्डादेश दिया गया है, हिसाब में नहीं लिया जायेगा।

26. उपरोक्त प्रावधान को केवल पढने से यह स्पष्ट हो जाता है कि अपील के लम्बित रहने के दौरान, अपीलीय न्यायालय को अपीलार्थी को जमानत पर रिहा करके सजा निलम्बित करने का अधिकार है। हालांकि मृत्युदंड या आजीवन कारावास या दस साल या उससे अधिक के कारावास से दण्डनीय अपराध के मामले में ऐसी कार्यवाही लोक अभियोजक को

अवसर देने और लिखित रूप में कारण दर्ज करने के बाद ही की जा सकती है।

27. *श्री जेठमलानी ने कश्मीरा सिंह बनाम पंजाब राज्य,* (1977) 4 एससीसी 291, *बाबु सिंह और अन्य बनाम यूपी राज्य,* (1978)1 एससीसी 579, *शैलेन्द्र कुमार बनाम दिल्ली राज्य,* (2000) 4 एससीसी 178: जे टी 2000 (1) एससीसी 184 और अन्य मामलों के निर्णयों पर भरोसा करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि उन कारणों में से एक जो इसके साथ वजन करते है कि सजा को निलंबित करने और आवेदकों काे जमानत पर रिहा करने का तर्क यह है कि विचारणीय न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किए जाने और अपीलीय न्यायालय द्वारा दोषी ठहराये जाने कि स्थिति में, अपील की सुनवाई में लम्बा समय लगता है और प्रार्थी को जेल में ही रहना पड़ता है।

28. जैसा कि उन मामलों में देखा गया है, भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत आजीवन कारावास की सजा पाने वाले व्यक्ति को जमानत पर रिहा नहीं करने की प्रथा यह थी कि निकट भविष्य में अपील पर सुनवाई होने की संभावना थी। लेकिन अगर ऐसी अपील पर लम्बे समय तक सुनवाई नहीं होगी और मापने योग्य समय के भीतर इसका निपटारा नहीं किया जायेगा, तो ऐसे व्यक्ति को कई वर्षों तक जेल में ही रखना न्याय के हित में नहीं होगा और यह उचित होगा कि यदि संहिता की धारा 389 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग प्रार्थी के पक्ष में किया जाए।

29. *कश्मीरा सिंह* मामलें में, इस न्यायालय ने कहा कि

"अब, इस न्यायालय के साथ साथ कई उच्च न्यायालयों में भी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध के लिये आजीवन कारावास की सजा पाने वाले व्यक्ति को जमानत पर रिहा नहीं करने कीप्रथा है। सवाल यह है कि क्या इस प्रथा को छोड देना चाहिए और यदि हां, तो किन परिस्थितियों में। यह स्पष्ट है कि किसी भी प्रथा को, चाहे वह उपयोग द्वारा पवित्र और समय द्वारा पवित्र क्यों न हो, उसे कायम रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है यदि वह अन्याय का कारण बनती है। न्यायालय की प्रत्येक प्रथा को न्याय के हित में अपना अंतिम आवश्यक औचित्य खोजना चाहिए। आजीवन कारावास की सजा पाने वाले व्यक्ति को जमानत पर रिहा नहीं करने की प्रथा है। उच्च न्यायालय और इस न्यायालय में इस आधार पर विकसित की गई थी कि एक बार जब कोई व्यक्ति को दोषी पाया जाता है और उसे आजीवन कारावास की सजा सुनायी जाती है, तो उसे तब तक नहीं छोड़ा जाना चाहिए, जबतक कि उसकी दोषसिद्धि और सजा को रद्द नहीं किया जाता है, लेकिन इस प्रथा का अंर्तनिहित सिद्धांत यह था कि ऐसे व्यक्ति की अपील का निपटारा एक मापनीय समय सीमा के

भीतर किया जायेगा, ताकि यदि वह अन्ततः निर्दोष पाया जाये, तो उसे अनावश्यक रूप से लम्बे समय तक जेल में नहीं रहना पड़े। जहां न्यायालय पांच से छः साल तक अपील का निपटारा करने की स्थिति में नहीं है, वहां इस

प्रथा का औचित्य लागू नहीं हो सकता है। किसी व्यक्ति को उस अपराध के लिए पांच या छः साल की अवधि के लिये जेल में रखना वास्तव में न्याय का उपहास होगा जो अन्ततः यह पाया जाता है कि उसनेअपराध नहीं किया है। क्या न्यायालय कभी उसे उस कैद की क्षतिपूर्ति कर सकता है जो अनुचित पायीगयी हो? क्या न्यायालय के लिये किसी व्यक्ति से यह कहना उचित होगा: हमने आपकी अपील स्वीकार कर ली है क्योंकि हमें लगता है कि आपके पास प्रथम दृष्टया मामला है, लेकिन दुर्भाग्य से हमारे पास कई वर्षों से आपकी अपील सुनने का समय नहीं है इसलिए जब तक हम आपकी अपील सुन नहीं लेते, आप अभी भी जैल में रहेंगे, भले ही आप निर्दोष हो?'' ऐसा न्याय प्रशासन जनता के मन में क्या विश्वास जगायेगा ? यह काफी हद तक संभंव हो सकता है, और वास्तव में कुछ मामलों में ऐसा हुआ है कि एक व्यक्ति अपनी अपील पर सुनवाई होने से पहले वह कारावास की पूरी अवधि काट चुका हो।

अपील सुनने के बाद ऐसे व्यक्ति को दोषमुक्ति करते समय क्या कोई न्यायाधीश पश्चाताप कि भावना से अभिभूत नहीं होगा? क्या यह उनकी न्याय भावना का अपमान नहीं होगा ? ऐसे व्यक्ति को दोषमुक्ति से क्या लाभ होगा जो पहले से ही कारावास की सजा या कम से कम उसका एक बड़ा हिस्सा काट चुका है? इसलिए यह बिल्कुल आवश्यक है कि यह न्यायालय अतीत में जिस प्रथा का पालन करता रहा है, उस पर पुर्नविचार किया जाना चाहिए और जब तक यह न्यायालय किसी अभियुक्त की अपील को उचित समय के भीतर सुनने की स्थिति में नहीं है, तब तक न्यायालय को सामान्यतः जहां अभियुक्त को अपनी दोषसिद्धि और सजा के खिलाफ अपील करने की अनुमति दी गई अभियुक्त को जमानत पर रिहा कर देना चाहिए, जब तक अन्यथा कार्य करने के लिए कोई ठोस आधार न हो।"

(जोर दिया गया)

30. हालांकि, दूसरा विचार भी उतना ही महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है। जब किसी व्यक्ति को अपीलीय न्यायायल द्वारा दोषी ठहराया जाता है, तो उसे तब तक 'निर्दोष व्यक्ति नहीं कहा जा सकता जब तक कि वरिष्ठ न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में अंतिम निर्णय दर्ज नहीं कर दिया जाता।

31. श्री गोपाल सुब्रमण्यम, अतिरिक्त महाअधिवक्ता ने हमारा ध्यान *अखिलेश कुमार सिन्हा बनाम बिहार राज्य,* (2000) 6 एससीसी 461, *विजय कुमार बनाम नरेंद्र और अन्य* (2002) 9 एससीसी 364: जेटी 2004 एसयूपीपी (1) एससी 60, *रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जयसवाल और अन्य,* (2002) 9 एससीसी 366: जेटी 2002 (7) एससी 477, *हरियाणा राज्य बनाम हसमत,* (2004) 6 एससीसी 175: जेटी (2004) 6 एससी 6, *किशोरी लाल बनाम रूपा और अन्य,* (2004) 7 एससीसी 638: जेटी 2004 (8) एससी 317 और *महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर वामनराव समर्थ,* (2008) 4 स्केल 412 जेटी 2008 (4) एससी 461 की ओर आकर्षित किया।

32. उपरोक्त मामलों में, यह देखा गया है कि एक बार किसी व्यक्ति को दोषी ठहराए जाने के बाद, आम तौर पर अपीलीय न्यायालय इस आधार पर आगे बढेगी कि ऐसा व्यक्ति दोषी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसके बाद भी, अपीलीय न्यायालय कारण दर्ज करके किसी दिए गए मामले में सजा को निलंबित करने के लिए स्वतंत्र है। लेकिन जैसा कि *विजय कुमार* के मामले में देखा गया है यह अच्छी तरह से तय है कि भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत दंडनीय हत्या जैसे गंभीर अपराध से जुडे मामले में जमानत की प्रार्थना पर विचार करते समय, न्यायालय को चाहिये कि अभियुक्त के खिलाफ लगाये गये आरोप की प्रकृति, अपराध करने के तरीके अभियुक्त को हत्या जैसे गंभीर अपराध के लिए दोषी

ठहराने के बाद, उसे जमानत पर रिहा करने की वांछनीयता जैसे प्रासंगिक कारको पर विचार करे। कुछ मामलों में यह भी देखा गया है कि ऐसे मामलों में सामान्य प्रथा यह है कि दण्डादेश को निलंबित नहीं किया जाता है और केवल असाधारण मामलों में ही दण्डादेश के निलंबन का लाभ दिया जा सकता है।

33. *हसमत* में, इस न्यायालय ने कहा,

> "6. संहिता की धारा 389 अपील लंबित रहने तक दण्डादेश के निष्पादन को निलंबित करने और आवेदक को जमानत पर रिहा करने से संबंधित है। जमानत और दण्डादेश के निलंबन के बीच अंतर है। धारा 38 के आवश्यक तत्वों में से एक है कि अपीलीय न्यायालय को अपील में किए गए आदेश या दण्डादेश के निष्पादन को निलंबित करने का आदेश देने के लिए कारणों को लिखित रूप में दर्ज करना होगा। यदि वह कारावास में है, तो उक्त न्यायालय निर्देश दे सकता है कि उसे जमानत पर या अपने मुचलकों पर रिहा कर दिया जाए। लिखित रूप में कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि प्रासंगिक पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए और दण्डादेश

के निलंबित करने और जमानत देने का आदेश नियमित रूप से पारित नहीं किया जाना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

34. केवल यह तथ्य कि विचारण की अवधि के दौरान, अभियुक्त जमानत पर था और स्वतंत्रता का कोई दुरूप्योग नहीं हुआ, दण्डादेश के निष्पादन के निलंबन और जमानत देने का वारंट नहीं है। इस बात पर विचार करना वास्तव में आवश्यक है कि क्या सजा के निष्पादन को निलंबित करने और जमानत देने के कारण मौजूद है।

35. तथ्यों और मामले की परिस्थितियों के आधार पर, यह दं.प्र.सं. की धारा 389 के तहत शक्ति का प्रयोग करने के लिए उपयुक्त मामला नहीं है। हालांकि विचारणीय न्यायालय ने प्रार्थी-अभियुक्त को उन अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया है जिनके लिए उस पर आरोप लगाया गया था, उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति करने के आदेश को उलट दिया और उसे भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत दोषसिद्ध किया और आजीवन कठोर कारावास की सजा सुनाई। उक्त आदेश से व्यथित होकर, उन्होने एक अपील दायर की है जिसे स्वीकार कर लिया गया है, पहले से बोर्ड पर है और अन्तिम सुनवाई का इन्तजार है। इसलिए समय की मापनीय दूरी के भीतर अपील पर सुनवाई होने की संभावना है। अपराध की संजीदगी, जिस तरह से अपराध करना बताया गया और अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखते

हुए, आवेदक द्वारा दण्डादेश के निलंबन और जमानत देने का कोई मामला नहीं बनाया गया है। जमानत आवेदन खारिज किये जाने योग्य है और तदनुसार खारिज किया जाता है

36. इस मामले से अलग होने से पहले, हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि यह नहीं समझा जाएगा कि हमने मामले के गुण-दोष पर किसी एक या दूसरे तरीके से कोई राय व्यक्त की हो और हमारे द्वारा यहां उपर की गई सभी टिप्पणियों प्रार्थी-अपीलार्थी द्वारा संहिता की धारा 389 के अंतर्गत दी गई प्रार्थना तक ही सीमित होना माना जाना चाहिए। जब भी मुख्य मामला यानी आपराधिक अपील सुनवाई के लिए आएगी, तो इस आदेश की टिप्पणियों से प्रभावित या बाधित हुए बिना इसका निर्णय उसके गुण-दोष के आधार पर किया जाएगा।

37. आवेदन तदनुसार निस्तारित किया जाता है।

के.के.टी. आवेदन का निस्तारण किया गया।

नोट - यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्रीमती ज्योति पुरी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी

व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।